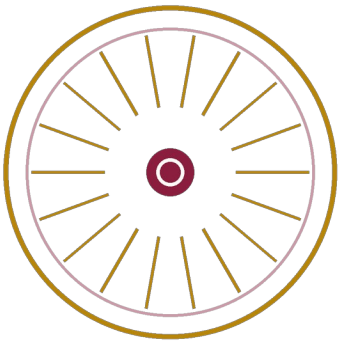

अध्याय 2 सांख्ययोग

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.01**

सञ्जय उवाच |

तं तथा कृपयाविष्टमश्रुपूर्णाकुलेक्षणम् |

विषीदन्तमिदं वाक्यमुवाच मधुसूदनः || **01** ||

हिन्दी अनुवाद:

संजय बोले—उस प्रकार करुणा से व्याप्त और आंसुओं से पूर्ण तथा व्याकुल नेत्रों वाले, शोकयुक्त उस अर्जुन से मधुसूदन (भगवान श्रीकृष्ण) ने यह वचन कहा।

सरल व्याख्या:

पहले अध्याय में अर्जुन का जो विषाद (अवसाद) शरीर और मन पर हावी हुआ था, वह यहाँ आंसुओं के रूप में बह रहा है। श्रीकृष्ण अर्जुन की इस दशा को देख रहे हैं। यहाँ कृष्ण को 'मधुसूदन' कहा गया है, जो यह संकेत देता है कि जैसे भगवान ने मधु राक्षस का संहार किया था, वैसे ही अब वे अर्जुन के भीतर के अज्ञान और शोक रूपी राक्षस का संहार करने वाले हैं।

यह श्लोक हमें बताता है कि... जब मनुष्य अपनी समस्याओं के बोझ से टूटकर पूरी तरह व्याकुल हो जाता है, तब उसके भीतर का अहंकार शांत होता है और वह परम चेतना (ईश्वर/विवेक) के उपदेश को सुनने के योग्य बनता है।

श्लोक संख्या: **2.02**

श्रीभगवानुवाच |

कुतस्त्वा कश्मलमिदं विषमे समुपस्थितम् |

अनार्यजुष्टमस्वर्ग्यमकीर्तिकरमर्जुन || **02** ||

हिन्दी अनुवाद:

श्रीभगवान बोले—हे अर्जुन! इस विषम समय में तुम्हें यह कायरता (मोह) किस कारण से प्राप्त हुई? क्योंकि इसका आश्रय न तो श्रेष्ठ पुरुष करते हैं, न यह स्वर्ग को देने वाला है और न कीर्ति को करने वाला ही है।

सरल व्याख्या:

गीता में यहाँ से भगवान श्रीकृष्ण का पहला संवाद शुरू होता है। वे अर्जुन को सांत्वना देने के बजाय सीधे फटकार लगाते हैं। वे पूछते हैं कि संकट की इस घड़ी में तुम्हारे भीतर यह 'कश्मल' (मानसिक गंदगी या कायरता) कहाँ से आ गई? कृष्ण कहते हैं कि यह व्यवहार किसी श्रेष्ठ व्यक्ति (अनार्य) के योग्य नहीं है, न ही इससे इस लोक में कीर्ति मिलेगी और न परलोक में गति।

यह श्लोक हमें बताता है कि... एक सच्चा मार्गदर्शक या गुरु संकट के समय झूठी सहानुभूति देकर मनुष्य की कमज़ोरी को बढ़ावा नहीं देता, बल्कि उसे झकझोर कर उसके वास्तविक स्वरूप की याद दिलाता है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.03**

> क्लैब्यं मा स्म गमः पार्थ नैतत्त्वय्युपपद्यते |
> क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परन्तप || **03** ||

हिन्दी अनुवाद:

हे पार्थ! नपुंसकता (कायरता) को मत प्राप्त हो, यह तुम्हारे योग्य नहीं है। हे परंतप (शत्रुओं को तपाने वाले)! हृदय की इस तुच्छ दुर्बलता को त्यागकर युद्ध के लिए खड़े हो जाओ।

सरल व्याख्या:

श्रीकृष्ण अर्जुन को 'पार्थ' (पृथापुत्र) और 'परंतप' (शत्रुओं को परास्त करने वाला) कहकर उसकी वास्तविक क्षमता को जगाते हैं। वे कहते हैं कि यह नपुंसकता या कायरता तुम्हारे स्वभाव के बिल्कुल विपरीत है। यह जो डर तुम्हें महसूस हो रहा है, यह कोई महान त्याग नहीं बल्कि 'हृदय की तुच्छ दुर्बलता' है। इसे तुरंत छोड़ो और खड़े हो जाओ।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... मन की कमज़ोरी को महानता का मुखौटा नहीं पहनाना चाहिए; जब कर्तव्य सामने हो, तो हर प्रकार के मानसिक भय को झटक कर कर्म में जुट जाना ही एकमात्र मार्ग है।

श्लोक संख्या: **2.04**

> अर्जुन उवाच |
> कथं भीष्ममहं सङ्ख्ये द्रोणं च मधुसूदन |
> इषुभिः प्रतियोत्स्यामि पूजार्हावरिसूदन || **04** ||

हिन्दी अनुवाद:

अर्जुन बोले—हे मधुसूदन! मैं रणभूमि में किस प्रकार बाणों से भीष्म पितामह और द्रोणाचार्य के विरुद्ध लड़ूंगा? क्योंकि हे अरिसूदन (शत्रुओं का नाश करने वाले)! वे दोनों ही परम पूजनीय हैं।

सरल व्याख्या:

भगवान की डांट सुनकर अर्जुन अपनी कमज़ोरी को सही ठहराने के लिए नैतिक तर्क देता है। वह कहता है कि सामने कोई साधारण शत्रु नहीं हैं, बल्कि भीष्म पितामह (जिन्होंने पाला) और द्रोणाचार्य (जिन्होंने विद्या दी) खड़े हैं। जो पूजनीय हैं, जिनके पैर छुए जाने चाहिए, उन पर मैं बाण कैसे चला सकता हूँ? अर्जुन का यह तर्क दिखाता है कि वह अभी भी सांसारिक रिश्तों और सामाजिक मर्यादाओं के द्वंद्व में फंसा हुआ है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... जब व्यक्तिगत भावनाएं और आदरणीय संबंध कर्तव्य के आड़े आ जाते हैं, तो मनुष्य का विवेक यह तय नहीं कर पाता कि बड़ा धर्म क्या है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.05**

> गुरूनहत्वा हि महानुभावान्श्रेयो भोक्तुं भैक्ष्यमपीह लोके |
> हत्वार्थकामांस्तु गुरूनिहैव भुञ्जीय भोगान्रुधिरप्रदिग्धान् || **05** ||

हिन्दी अनुवाद:

महानुभाव गुरुजनों को न मारकर इस संसार में भीख मांगकर खाना भी कल्याणकारी है; क्योंकि गुरुजनों को मारकर भी इस संसार में रुधिर (खून) से सने हुए अर्थ और काम रूप भोगों को ही तो भोगूंगा।

सरल व्याख्या:

अर्जुन अवसाद में इतना आगे बढ़ जाता है कि वह कहता है कि क्षत्रिय धर्म छोड़कर भीख मांगना बेहतर है, लेकिन मैं अपने गुरुओं की हत्या नहीं करूँगा। वह तर्क देता है कि अगर हम युद्ध जीत भी गए, तो वह ऐश्वर्य और सुख अपनों के खून से सना हुआ होगा। ऐसे सुख से क्या आनंद मिलेगा? अर्जुन यहाँ केवल तात्कालिक शारीरिक विनाश को देख रहा है, उस वृहत्तर सामाजिक न्याय को नहीं जिसके लिए यह युद्ध हो रहा है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... जब बुद्धि मोहग्रस्त होती है, तो व्यक्ति अपने गौरवमयी इतिहास और उत्तरदायित्व को भूलकर पलायन (भागने) को ही सर्वोत्तम उपाय मानने लगता है।

श्लोक संख्या: **2.06**

> न चैतद्विद्मः कतरन्नो गरीयो यद्वा जयेम यदि वा नो जयेयुः |
> यानेव हत्वा न जिजीविषामस्तेऽवस्थितः प्रमुखे धार्तराष्ट्राः || **06** ||

हिन्दी अनुवाद:

और हम यह भी नहीं जानते कि हमारे लिए क्या श्रेष्ठ है—युद्ध करना या न करना; अथवा हम जीतेंगे या वे हमें जीतेंगे। जिनको मारकर हम जीना भी नहीं चाहते, वे ही धृतराष्ट्र के पुत्र हमारे सामने खड़े हैं।

सरल व्याख्या:

यहाँ अर्जुन अपनी मानसिक उलझन (Confusion) को पूरी तरह स्वीकार करता है। वह कहता है कि मैं असमंजस में हूँ कि लड़ना बेहतर है या पीछे हटना। जीत हमारी होगी या उनकी, यह भी अनिश्चित है। और सबसे बड़ी विडंबना यह है कि जिनके बिना जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती, वे ही सामने शत्रु बनकर खड़े हैं। यह मन की वह स्थिति है जहाँ निर्णय लेने की क्षमता पूरी तरह शून्य हो जाती है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... अत्यधिक असमंजस की स्थिति में मनुष्य लाभ-हानि और जय-पराजय के गणित में ऐसा उलझता है कि वह कर्म करने की दिशा ही खो बैठता है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.07**

> कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः पृच्छामि त्वां धर्मसम्मूढचेताः |
> यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम् || **07** ||

हिन्दी अनुवाद:

कायरता रूप दोष से नष्ट हुए स्वभाव वाला और धर्म के विषय में मोहित चित्त हुआ मैं आपसे पूछता हूँ कि जो साधन निश्चित रूप से कल्याणकारी हो, वह मेरे लिए कहिए। मैं आपका शिष्य हूँ, आपके शरण हुए मुझको शिक्षा दीजिए।

सरल व्याख्या:

यहां अर्जुन अपनी हार स्वीकार करता है। वह मानता है कि उसका स्वभाव कायरता से ग्रस्त हो गया है और वह धर्म-अधर्म का निर्णय करने में असमर्थ है। यहाँ अर्जुन अपना सखा भाव (मित्रता) छोड़कर श्रीकृष्ण के सामने पूरी तरह समर्पित हो जाता है और कहता है—"मैं आपका शिष्य हूँ, आपकी शरण में हूँ, मुझे सही रास्ता दिखाइए।"

> यह श्लोक हमें बताता है कि... जब तक मनुष्य अपने ज्ञान और अहंकार में रहता है, तब तक उसे सत्य नहीं मिलता। जैसे ही वह अपनी अज्ञानता स्वीकार कर सच्चे गुरु की शरण में जाता है, समाधान का मार्ग खुल जाता है।

श्लोक संख्या: **2.08**

> न हि प्रपश्यामि ममापनुद्याद्यच्छोकमुच्छोषणमिन्द्रियाणाम् |
> अवाप्य भूमावसपत्नमृद्धं राज्यं सुराणामपि चाधिपत्यम् || **08** ||

हिन्दी अनुवाद:

क्योंकि भूमि पर निष्कंटक, धन-धान्य संपन्न राज्य को और देवताओं के आधिपत्य (इन्द्र पद) को प्राप्त करके भी, मैं उस उपाय को नहीं देखता जो मेरी इन्द्रियों को सुखाने वाले इस शोक को दूर कर सके।

सरल व्याख्या:

अर्जुन स्पष्ट करता है कि उसका यह दुःख कोई साधारण सांसारिक दुःख नहीं है। वह कहता है कि अगर मुझे पूरी पृथ्वी का अखंड राज्य मिल जाए या देवताओं का राजा भी बना दिया जाए, तो भी मेरे भीतर जो इन्द्रियों को सुखाने वाली आग (शोक) लगी है, वह शांत नहीं होगी। बाहरी संपदा कभी आंतरिक खालीपन या मानसिक व्याकुलता को ठीक नहीं कर सकती।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... मानसिक संताप और वैचारिक भ्रम का समाधान बाहरी सुख-सुविधाओं या ऊंचे पदों में नहीं, बल्कि केवल आंतरिक ज्ञान और सही दृष्टिकोण से ही संभव है।

Satyadhibhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.09**

> सञ्जय उवाच |
>
> एवमुक्त्वा हृषीकेशं गुडाकेशः परन्तप |
>
> न योत्स्य इति गोविन्दमुक्त्वा तूष्णीं बभूव ह || **09** ||

हिन्दी अनुवाद:

संजय बोले—हे राजन्! शत्रुओं को तपाने वाले अर्जुन (गुडाकेश) ने इन्द्रियों के स्वामी हृषीकेश श्रीकृष्ण से इस प्रकार कहकर, फिर गोविन्द से "मैं युद्ध नहीं करूँगा" यह स्पष्ट कह दिया और चुप हो गए।

सरल व्याख्या:

संजय धृतराष्ट्र को युद्धभूमि का आँखों देखा हाल बता रहे हैं। अर्जुन ने अपनी सारी बात श्रीकृष्ण के सामने रख दी, अपना समर्पण भी कर दिया, लेकिन अंत में अपनी पुरानी हठ या कमज़ोरी के वश में होकर कह दिया—"न योत्स्य" (मैं युद्ध नहीं करूँगा) और मौन धारण कर लिया। यह दिखाता है कि शरण में जाने के बाद भी मनुष्य का पुराना ढर्रा या उसका अवसाद उसे तुरंत छोड़ने नहीं देता।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... समर्पण की शुरुआत में भी मनुष्य अपने पुराने विचारों के प्रभाव में रहता है, जहाँ वह सही मार्गदर्शन तो चाहता है पर कर्म करने से कतराता है।

श्लोक संख्या: **2.10**

> तमुवाच हृषीकेशः प्रहसन्निव भारत |
>
> सेनयोरुभयोर्मध्ये विषीदन्तमिदं वचः || **10** ||

हिन्दी अनुवाद:

हे भरतवंशी धृतराष्ट्र! दोनों सेनाओं के बीच में शोक करते हुए उस अर्जुन से हृषीकेश श्रीकृष्ण ने मानो हंसते हुए यह वचन कहा।

सरल व्याख्या:

यहाँ भगवान कृष्ण की प्रतिक्रिया अद्भुत है। जहाँ अर्जुन रो रहा है, हताश है, वहीं श्रीकृष्ण 'प्रहसन्निव' यानी मुस्कुरा रहे हैं। वे दोनों सेनाओं के बीच खड़े होकर मुस्कुराते हैं। यह मुस्कान करुणा की है, आत्मविश्वास की है और उस सत्य की है जो वे अब अर्जुन को देने जा रहे हैं। एक डॉक्टर जैसे मरीज़ की बीमारी देखकर घबराता नहीं बल्कि इलाज के प्रति आश्वस्त होकर मुस्कुराता है, ठीक वैसे ही कृष्ण मुस्कुरा रहे हैं क्योंकि वे जानते हैं कि अर्जुन का यह भ्रम क्षणिक है और ज्ञान के प्रकाश से दूर हो जाएगा।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... जब संसार के थपेड़ों से हारा हुआ व्यक्ति पूर्ण समर्पण करता है, तो ईश्वरीय चेतना मुस्कुराकर उसके कल्याण का मार्ग प्रशस्त करती है। यहीं से वास्तविक 'गीता-ज्ञान' की गंगा बहना शुरू होती है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.11**

> श्रीभगवानुवाच |
>
> अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषसे |
>
> गतासूनगतासूंश्च नानुशोचन्ति पण्डिताः || **11** ||

हिन्दी अनुवाद:

श्रीभगवान बोले—तुम उन लोगों के लिए शोक करते हो जो शोक करने योग्य नहीं हैं और ज्ञानियों जैसी बातें करते हो। जिनके प्राण चले गए हैं उनके लिए और जिनके प्राण नहीं गए हैं उनके लिए भी बुद्धिमान (पण्डित) लोग शोक नहीं करते।

सरल व्याख्या:

श्रीकृष्ण यहाँ से गीता का मुख्य दर्शन शुरू करते हैं। वे अर्जुन के विरोधाभास को पकड़ते हैं—एक तरफ अर्जुन रो रहा है और दूसरी तरफ समाजशास्त्र के बड़े-बड़े तर्क दे रहा है। कृष्ण कहते हैं कि जो ज्ञानी होते हैं, वे जानते हैं कि यह शरीर नश्वर है और आत्मा अमर है। इसलिए वे किसी के जीने या मरने पर उस गहरे मोह में नहीं डूबते जो मनुष्य के विवेक को हर ले।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... वास्तविक ज्ञान बातों में नहीं, बल्कि जीवन की अनिवार्य सच्चाइयों (जैसे मृत्यु) को बिना विचलित हुए स्वीकार करने में दिखाई देता है।

श्लोक संख्या: **2.12**

> न त्वेवाहं जातु नासं न त्वं नेमे जनाधिपाः |
>
> न चैव न भविष्यामः सर्वे वयमतः परम् || **12** ||

हिन्दी अनुवाद:

ऐसा कभी नहीं था कि मैं नहीं था, या तुम नहीं थे, अथवा ये राजा लोग नहीं थे; और न ही ऐसा है कि इसके बाद हम सब नहीं रहेंगे।

सरल व्याख्या:

श्रीकृष्ण अर्जुन को काल (Time) की अनंतता का पाठ पढ़ा रहे हैं। वे कहते हैं कि अस्तित्व का कभी अंत नहीं होता। जन्म से पहले भी हम सब थे, आज भी हैं और इस शरीर के नष्ट होने के बाद भी हमारा अस्तित्व रहेगा। हम केवल रूपों के बदलने से डर जाते हैं, जबकि मूल तत्व हमेशा सुरक्षित रहता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... जीवन और चेतना का प्रवाह निरंतर है; मृत्यु केवल एक पड़ाव है, अंत नहीं।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.13**

> देहिनोऽस्मिन्यथा देहे कौमारं यौवनं जरा |
> तथा देहान्तरप्राप्तिर्धीरस्तत्र न मुह्यती || **13** ||

हिन्दी अनुवाद:

जैसे इस देह में जीवात्मा की कुमार (बाल्यावस्था), युवा और वृद्धावस्था होती है, वैसे ही (मृत्यु के बाद) दूसरे शरीर की प्राप्ति होती है; उस विषय में धीर (बुद्धिमान) मनुष्य मोहित नहीं होता।

सरल व्याख्या:

भगवान एक बहुत ही सरल और व्यावहारिक उदाहरण देते हैं। वे कहते हैं कि जैसे हमारा बचपन जाता है और जवानी आती है, फिर जवानी जाकर बुढ़ापा आता है, तो हम रोते नहीं हैं क्योंकि हमें पता है कि यह शरीर के विकास का नियम है। ठीक इसी प्रकार, बुढ़ापे के बाद अगला शरीर मिलना भी एक स्वाभाविक बदलाव है। जो धैर्यवान व्यक्ति इस नियम को समझता है, वह मृत्यु से नहीं घबराता।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... परिवर्तन संसार का शाश्वत नियम है; शरीर के बदलावों को सहजता से स्वीकार करना ही परिपक्वता है।

श्लोक संख्या: **2.14**

> मात्रास्पर्शास्तु कौन्तेय शीतोष्णसुखदुःखदाः |
> आगमापायिनोऽनित्यास्तांस्तितिक्षस्व भारत || **14** ||

हिन्दी अनुवाद:

हे कुन्तीपुत्र! इन्द्रियों और विषयों के संयोग (मात्रास्पर्श) तो केवल सर्दी-गर्मी और सुख-दुःख को देने वाले हैं। ये आने-जाने वाले और अनित्य हैं, इसलिए हे भारत (अर्जुन)! तुम उनको सहन करो।

सरल व्याख्या:

हमारे जीवन में सुख और दुःख कैसे आते हैं? इन्द्रियों (आँख, कान, त्वचा आदि) का जब बाहरी दुनिया के विषयों से संपर्क होता है, तो अनुकूल होने पर सुख और प्रतिकूल होने पर दुःख महसूस होता है। जैसे सर्दी और गर्मी आती है और चली जाती है, वैसे ही सुख और दुःख भी क्षणभंगुर (Temporary) हैं। कृष्ण कहते हैं कि इनसे प्रभावित होकर अपना कर्तव्य मत छोड़ो, बल्कि इन्हें समभाव से सहना सीखो।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... परिस्थितियां चाहे कितनी भी अनुकूल या प्रतिकूल हों, वे स्थायी नहीं रहतीं; मानसिक मजबूती के लिए धैर्यपूर्वक टिके रहना (तितिक्षा) आवश्यक है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.15**

> यं हि न व्यथयन्त्येते पुरुषं पुरुषर्षभ |
> समदुःखसुखं धीरं सोऽमृतत्वाय कल्पते || **15** ||

हिन्दी अनुवाद:

क्योंकि हे पुरुषश्रेष्ठ! सुख और दुःख को समान समझने वाले जिस धीर मनुष्य को ये इन्द्रियों के विषय व्याकुल नहीं करते, वह मोक्ष (अमरत्व) प्राप्त करने के योग्य होता है।

सरल व्याख्या:

श्रीकृष्ण कहते हैं कि जो व्यक्ति सुख के आने पर बहुत अधिक उछलता नहीं और दुःख के आने पर पूरी तरह टूटता नहीं, वही वास्तव में आत्मज्ञानी और महान है। ऐसे समभाव (Balance) में रहने वाला व्यक्ति ही जीवन के सर्वोच्च लक्ष्य यानी मानसिक शांति और अमरत्व को प्राप्त कर सकता है। सुख-दुःख में तटस्थ रहना ही सबसे बड़ी साधना है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... मानसिक स्थिरता और समभाव ही जीवन की सभी चिंताओं से मुक्ति (मोक्ष) का एकमात्र द्वार है।

श्लोक संख्या: **2.16**

> नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः |
> उभयोरपि दृष्टोऽन्तस्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः || **16** ||

हिन्दी अनुवाद:

असत्य (जिसका अस्तित्व परिवर्तनशील है, जैसे शरीर) का तो कोई अस्तित्व नहीं है और सत्य (जो कभी नहीं बदलता, जैसे आत्मा) का कभी अभाव नहीं होता। इन दोनों का ही तत्व, तत्वदर्शियों (ज्ञानियों) द्वारा देखा गया है।

सरल व्याख्या:

यह श्लोक दर्शन की दृष्टि से बहुत गहरा है। यहाँ 'सत्य' और 'असत्य' को परिभाषित किया गया है। जो सदा रहे, जो कभी न बदले, वही सत्य है। जो बदल जाए या नष्ट हो जाए, वह असत्य (या अनित्य) है। यह संसार और हमारा शरीर लगातार बदल रहा है, इसलिए यह सदा एक सा नहीं रह सकता। लेकिन इसके भीतर जो चेतना है, वह अपरिवर्तनशील है। ज्ञानी पुरुष इसी अविनाशी तत्व पर अपना ध्यान केंद्रित करते हैं।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... नश्वर चीजों के नष्ट होने पर शोक करना व्यर्थ है; जो शाश्वत है, उस पर भरोसा रखना ही बुद्धिमानी है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.17**

> अविनाशि तु तद्विद्धि येन सर्वमिदं ततम् |
> विनाशमव्ययस्यास्य न कश्चित्कर्तुमर्हति || **17** ||

हिन्दी अनुवाद:
तुम उस तत्व को अविनाशी (जिसका कभी नाश न हो) समझो, जिससे यह संपूर्ण जगत व्याप्त है। इस अविनाशी का विनाश करने में कोई भी समर्थ नहीं है।

सरल व्याख्या:
श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि जिस परम चेतना या आत्मा ने इस पूरे ब्रह्मांड को अपने भीतर समाया हुआ है, उसे कभी नष्ट नहीं किया जा सकता। कोई भी अस्त्र, शस्त्र, सेना या शक्ति उस मूल चेतना को छू भी नहीं सकती। जब आत्मा अमर और सुरक्षित है, तो अर्जुन का यह डर कि 'मैं मार दूँगा' या 'ये मर जाएँगे', केवल उसके अज्ञान को दिखाता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... हमारे जीवन की मूल ऊर्जा और आत्मा अमर है, उसे बाहरी संसार की कोई भी आपदा नष्ट नहीं कर सकती।

श्लोक संख्या: **2.18**

> अन्तवन्त इमे देहा नित्यस्योक्ताः शरीरिणः |
> अनाशिनोऽप्रमेयस्य तस्माद्युध्यस्व भारत || **18** ||

हिन्दी अनुवाद:
इस अविनाशी, अप्रमेय (जो बुद्धि या इन्द्रियों से पूरी तरह मापा न जा सके) और नित्य जीवात्मा के ये सब शरीर नाशवान कहे गए हैं; इसलिए हे भारत! तुम युद्ध करो।

सरल व्याख्या:
भगवान कहते हैं कि नष्ट होने वाली चीज़ केवल यह भौतिक शरीर है। जो आत्मा इसके भीतर रहती है, वह अनंत और शाश्वत है। जब शरीर का अंत निश्चित ही है, और आत्मा को मारा नहीं जा सकता, तो फिर कर्तव्य से भागना कैसा? कृष्ण अर्जुन को उसके क्षत्रिय धर्म की याद दिलाते हुए कहते हैं कि न्याय की रक्षा के लिए उठो और अपनी पूरी शक्ति से युद्ध करो।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... शरीर का अंत तो एक दिन होना ही है, इसलिए मृत्यु के भय से अपने अनिवार्य कर्तव्यों और उत्तरदायित्वों से मुंह नहीं मोड़ना चाहिए।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.19**

> य एनं वेत्ति हन्तारं यश्चैनं मन्यते हतम् |
> उभौ तौ न विजानीतो नायं हन्ति न हन्यते || **19** ||

हिन्दी अनुवाद:

जो इस आत्मा को मारने वाला समझता है और जो इसे मरा हुआ मानता है, वे दोनों ही सत्य को नहीं जानते; क्योंकि यह आत्मा न तो किसी को मारता है और न ही किसी के द्वारा मारा जाता है।

सरल व्याख्या:

अर्जुन के मन में यह गहरी ग्लानि थी कि वह अपने हाथों से अपने सगे-संबंधियों की हत्या करने जा रहा है। श्रीकृष्ण उसके इसी भ्रम पर चोट करते हैं। वे कहते हैं कि यह सोचना ही गलत है कि कोई किसी को मार सकता है। मारने वाला और मरने वाला, दोनों ही केवल शरीर के स्तर पर सोचते हैं। आत्मा इन सब क्रियाओं से परे, अछूती और शाश्वत रहती है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... कर्तापन का अहंकार (कि 'मैंने किया' या 'मैं मार रहा हूँ') ही मनुष्य के बंधन और दुःख का मूल कारण है।

श्लोक संख्या: **2.20**

> न जायते म्रियते वा कदाचि न्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः |
> अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे || **20** ||

हिन्दी अनुवाद:

यह आत्मा किसी भी काल में न तो जन्म लेता है और न मरता है; और न यह एक बार होकर फिर होने वाला ही है। यह अजन्मा, नित्य, सनातन और पुरातन है; शरीर के मारे जाने पर भी यह नहीं मारा जाता।

सरल व्याख्या:

यह आत्मा के वास्तविक स्वरूप को बताने वाला सबसे प्रसिद्ध और सुंदर श्लोक है। आत्मा पर संसार के नियम लागू नहीं होते। इसके छह विकार नहीं होते (जैसे जन्म लेना, बढ़ना, बदलना, बूढ़ा होना और नष्ट होना)। यह अजन्मा (जिसका जन्म न हुआ हो), नित्य (हमेशा रहने वाला) और सनातन (सबसे पुराना पर हमेशा नया) है। जब तलवार चलती है या बाण लगता है, तो वह केवल मिट्टी के बने इस शरीर को नष्ट करता है, भीतर बैठी उस दिव्य चेतना को नहीं।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... हम मूल रूप से यह हाड़-मांस का शरीर नहीं, बल्कि वह अमर चेतना हैं जो हर परिस्थिति और भौतिक विनाश से परे हमेशा सुरक्षित रहती है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.21**

> वेदाविनाशिनं नित्यं य एनमजमव्ययम् |
> कथं स पुरुषः पार्थ कं घातयति हन्ति कम् || **21** ||

हिन्दी अनुवाद:

हे पार्थ! जो पुरुष इस आत्मा को अविनाशी, नित्य, अजन्मा और अव्यय (क्षय रहित) जानता है, वह पुरुष कैसे किसी को मरवाता है और कैसे किसी को मारता है?

सरल व्याख्या:

श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि जब आत्मा का मूल स्वभाव ही ऐसा है कि वह कभी नष्ट नहीं हो सकती, तो फिर मरने और मारने की बात ही निरर्थक हो जाती है। जो व्यक्ति इस परम सत्य को गहराई से जान लेता है, उसके भीतर से यह भ्रम मिट जाता है कि वह किसी का जीवन ले रहा है। वह स्वयं को केवल एक माध्यम समझकर अपना कर्तव्य निभाता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... पूर्ण ज्ञान प्राप्त होने पर मनुष्य के भीतर का यह भ्रम और कर्तापन का अहंकार समाप्त हो जाता है कि 'मैं किसी को नष्ट कर रहा हूँ'।

श्लोक संख्या: **2.22**

> वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि |
> तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही || **22** ||

हिन्दी अनुवाद:

जैसे मनुष्य पुराने वस्त्रों को त्यागकर दूसरे नए वस्त्रों को ग्रहण करता है, वैसे ही जीवात्मा पुराने शरीरों को त्यागकर दूसरे नए शरीरों में प्रवेश करती है।

सरल व्याख्या:

यह गीता के सबसे प्रसिद्ध और सुंदर उदाहरणों में से एक है। भगवान आत्मा के बदलने की प्रक्रिया को कपड़ों के बदलने जैसा सरल बताते हैं। जब हमारे कपड़े पुराने या फट जाते हैं, तो हम उन्हें बदलकर नए कपड़े पहन लेते हैं; इसके लिए हम दुखी नहीं होते। ठीक वैसे ही, यह शरीर जब अपना उद्देश्य पूरा कर लेता है, तो आत्मा इसे छोड़कर नया शरीर धारण कर लेती है। मृत्यु केवल एक आवरण का बदलना है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... मृत्यु जीवन का अंत नहीं है, बल्कि चेतना द्वारा एक पुराने माध्यम को छोड़कर नया माध्यम चुनने की एक अत्यंत स्वाभाविक प्रक्रिया है।

Satyabhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.23**

> नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः |
>
> न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः || **23** ||

हिन्दी अनुवाद:

इस आत्मा को शस्त्र काट नहीं सकते, इसको आग जला नहीं सकती, इसको जल गला नहीं सकता और वायु सुखा नहीं सकती।

सरल व्याख्या:

संसार की कोई भी भौतिक वस्तु या प्रकृति का कोई भी तत्व (अग्नि, जल, वायु, पृथ्वी) आत्मा को प्रभावित नहीं कर सकता। अर्जुन का धनुष 'गांडीव' या शत्रुओं के बाण केवल भौतिक शरीरों को काट सकते हैं, लेकिन उस परम चेतना को छू भी नहीं सकते। आत्मा इन सभी प्राकृतिक और भौतिक सीमाओं से सर्वथा परे है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... हमारे भीतर का मूल तत्व पूर्णतः सुरक्षित और अजेय है; संसार की कोई भी आपदा या संकट उसे नष्ट नहीं कर सकता।

श्लोक संख्या: **2.24**

> अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्लेद्योऽशोष्य एव च |
>
> नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातनः || **24** ||

हिन्दी अनुवाद:

क्योंकि यह आत्मा अच्छेद्य (न कटने वाला) है, यह अदाह्य (न जलने वाला) है, यह अक्लेद्य (न गलने वाला) और निःसंदेह अशोष्य (न सूखने वाला) है। यह आत्मा नित्य, सर्वव्यापी, स्थिर, अचल और सनातन है।

सरल व्याख्या:

श्रीकृष्ण पिछले श्लोक की बात को और दृढ़ करते हुए आत्मा के गुणों को विस्तार से बताते हैं। वे कहते हैं कि आत्मा 'सर्वगतः' यानी हर जगह मौजूद है, 'स्थाणुः' यानी स्थिर है, और 'अचलः' है। जो चीज़ कभी हिल नहीं सकती, जिसे बदला नहीं जा सकता, वही हमारा वास्तविक स्वरूप है। इसलिए बाहरी बदलावों को देखकर व्याकुल होना अज्ञानता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... आत्मा समय और स्थान **(Time and Space)** की सीमाओं से परे है; यह सदा एक रस रहने वाला सनातन सत्य है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.25**

> अव्यक्तोऽयमचिन्त्योऽयमविकार्योऽयमुच्यते |
> तस्मादेवं विदित्वैनं नानुशोचितुमर्हसि || **25** ||

हिन्दी अनुवाद:

यह आत्मा अव्यक्त (इन्द्रियों से न दिखने वाला), अचिन्त्य (बुद्धि से न सोचने योग्य) और अविकारी (बदलाव रहित) कहा जाता है। इसलिए हे अर्जुन! इस आत्मा को ऐसा जानकर तुम्हें शोक नहीं करना चाहिए।

सरल व्याख्या:

हमारी आँखें जो देख सकती हैं, वह 'व्यक्त' है। लेकिन आत्मा इन भौतिक इन्द्रियों की पकड़ में नहीं आती, इसलिए वह 'अव्यक्त' है। हमारा मन जिसके बारे में कल्पना नहीं कर सकता, वह 'अचिन्त्य' है। कृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि जब तुम इस अविनाशी और अपरिवर्तनीय सत्य को समझ जाओगे, तो तुम्हारा सारा शोक अपने आप ही समाप्त हो जाएगा।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... जब हम अपनी दृष्टि को दृश्य (शरीर) से हटाकर द्रष्टा (आत्मा) पर केंद्रित करते हैं, तो मानसिक संताप का अंत हो जाता है।

श्लोक संख्या: **2.26**

> अथ चैनं नित्यजातं नित्यं वा मन्यसे मृतम् |
> तथापि त्वं महाबाहो नैवं शोचितुमर्हसि || **26** ||

हिन्दी अनुवाद:

और यदि तुम इस आत्मा को सदा जन्म लेने वाला और सदा मरने वाला ही मानते हो, तो भी हे महाबाहो (विशाल भुजाओं वाले अर्जुन)! तुम्हें इस प्रकार शोक करना योग्य नहीं है।

सरल व्याख्या:

श्रीकृष्ण यहाँ तर्क का एक दूसरा पहलू सामने रखते हैं। वे कहते हैं कि मान लो, अगर तुम इस उच्च आध्यात्मिक दर्शन (आत्मा की अमरता) को नहीं भी मानते और यह सोचते हो कि शरीर के साथ ही जीवन पैदा होता है और नष्ट होता है, तो भी तुम्हारा रोना व्यर्थ है। क्योंकि जो चीज़ प्रकृति के नियम के अनुसार हर पल बदल रही है, उस पर शोक करने का कोई तार्किक आधार नहीं है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... यदि हम संसार को केवल भौतिक दृष्टि से भी देखें, तो भी प्रकृति के अनिवार्य नियमों (जैसे मृत्यु) पर विलाप करना नासमझी ही है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.27**

> जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च |
> तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि || **27** ||

हिन्दी अनुवाद:
क्योंकि जन्म लेने वाले की मृत्यु निश्चित है और मरने वाले का जन्म निश्चित है; इसलिए इस बिना उपाय वाले (अपरिहार्य) विषय में तुम्हें शोक नहीं करना चाहिए।

सरल व्याख्या:
यह श्लोक जीवन के सबसे बड़े और अकाट्य सत्य को सामने रखता है। जिसने भी इस संसार में आकार लिया है, उसका अंत होना तय है। और जिसका अंत हुआ है, उसका पुनः प्रकट होना भी उतना ही निश्चित है। यह चक्र ऐसे ही चलता रहता है। जब यह नियम 'अपरिहार्य' है—यानी इसे बदला ही नहीं जा सकता—तो फिर उस बात के लिए रोना कैसा जिसे कोई टाल नहीं सकता?

> यह श्लोक हमें बताता है कि... जो चीजें हमारे नियंत्रण में नहीं हैं और प्रकृति का अटल नियम हैं, उन्हें सहजता से स्वीकार कर लेना ही बुद्धिमानी है।

श्लोक संख्या: **2.28**

> अव्यक्तादीनि भूतानि व्यक्तमध्यानि भारत |
> अव्यक्तनिधनान्येव तत्र का परिदेवना || **28** ||

हिन्दी अनुवाद:
हे भारत! संपूर्ण प्राणी जन्म से पहले अव्यक्त (बिना शरीर के) थे, मध्य काल में व्यक्त (शरीर युक्त) दिखाई देते हैं और मृत्यु के बाद फिर अव्यक्त हो जाने वाले हैं; फिर ऐसी स्थिति में शोक क्या करना?

सरल व्याख्या:
भगवान संसार के जीवों की स्थिति को एक नाटक या प्रवाह की तरह समझाते हैं। जन्म से पहले हम कहाँ थे, हमें नहीं पता (अव्यक्त)। मृत्यु के बाद हम कहाँ जाएँगे, वह भी आँखों से नहीं दिखता (अव्यक्त)। हम केवल बीच के इस थोड़े से समय में एक आकार में दिखाई दे रहे हैं (व्यक्त)। जो चीज़ शुरुआत और अंत में अदृश्य है, वह केवल बीच में थोड़ी देर के लिए प्रकट हुई है, तो उसके ओझल होने पर कैसा विलाप?

> यह श्लोक हमें बताता है कि... संसार के संबंध और रूप पानी के बुलबुले की तरह हैं जो कुछ समय के लिए प्रकट होते हैं और फिर अपने मूल स्रोत में समा जाते हैं।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.29**

> आश्चर्यवत्पश्यति कश्चिदेन माश्चर्यवद्वदति तथैव चान्यः |
> आश्चर्यवच्चैनमन्यः शृणोति श्रुत्वाप्येनं वेद न चैव कश्चित् || **29** ||

हिन्दी अनुवाद:

कोई इस आत्मा को आश्चर्य की तरह देखता है, कोई दूसरा इसके तत्व को आश्चर्य की तरह बोलता है और कोई अन्य इसे आश्चर्य की तरह सुनता है; परंतु सुनकर भी इस आत्मा को कोई भी नहीं जान पाता।

सरल व्याख्या:

आत्मा का सत्य इतना विस्मयकारी और गहरा है कि जब लोग इसके बारे में पहली बार सुनते या अनुभव करते हैं, तो वे चकित रह जाते हैं। शब्दों के माध्यम से इसे पूरी तरह समझाना कठिन है। लोग इसके बारे में पढ़ते हैं, सुनते हैं, पर जब तक स्वयं भीतर उतरकर इसका अनुभव न करें, तब तक यह सत्य एक रहस्य ही बना रहता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... आत्मज्ञान कोई बौद्धिक विषय नहीं है जिसे केवल पढ़ कर समझ लिया जाए, यह एक आंतरिक अनुभूति है जो गहरे ध्यान और बोध से घटित होती है।

श्लोक संख्या: **2.30**

> देही नित्यमवध्योऽयं देहे सर्वस्य भारत |
> तस्मात्सर्वाणि भूतानि न त्वं शोचितुमर्हसि || **30** ||

हिन्दी अनुवाद:

हे भारत! सबके शरीर में रहने वाला यह देही (आत्मा) सदा ही अवध्य (जिसका वध न किया जा सके) है; इसलिए संपूर्ण प्राणियों के लिए तुम्हें शोक करना उचित नहीं है।

सरल व्याख्या:

श्रीकृष्ण यहाँ सांख्ययोग के इस पहले चरण का उपसंहार (Conclusion) करते हैं। वे अर्जुन को अंतिम रूप से आश्वस्त करते हैं कि सामने चाहे भीष्म हों, द्रोण हों या कोई भी जीव हो—उनके भीतर रहने वाला तत्व हमेशा सुरक्षित है, उसे कभी मारा नहीं जा सकता। जब मूल सत्य यह है, तो फिर कर्तव्य पथ पर खड़े होकर इन सब सांसारिक शरीरों के लिए आँसू बहाना बंद करो।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... जीवन का मूल तत्व परम पावन और अमर है, इस दृढ़ विश्वास के साथ मनुष्य को अपने कर्तव्य पथ पर निर्भय होकर आगे बढ़ना चाहिए।

Satyanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.31**

> स्वधर्ममपि चावेक्ष्य न विकम्पितुमर्हसि |
> धर्म्याद्धि युद्धाच्छ्रेयोऽन्यत्क्षत्रियस्य न विद्यते || **31** ||

हिन्दी अनुवाद:

अपने धर्म (कर्तव्य) को देखकर भी तुम्हें भयभीत या विचलित नहीं होना चाहिए; क्योंकि क्षत्रिय के लिए धर्मयुक्त युद्ध से बढ़कर दूसरा कोई कल्याणकारी मार्ग नहीं है।

सरल व्याख्या:

श्रीकृष्ण अब अर्जुन को व्यावहारिक और सामाजिक कर्तव्य (स्वधर्म) के धरातल पर ला रहे हैं। वे कहते हैं कि यदि आध्यात्मिक दृष्टि से परे हटकर तुम्हारे सामाजिक उत्तरदायित्व को भी देखा जाए, तो एक क्षत्रिय का मूल स्वभाव और कर्तव्य समाज में न्याय की रक्षा करना है। अन्याय के विरुद्ध खड़े होना और धर्मयुद्ध लड़ना ही एक योद्धा के लिए सबसे बड़ा और पवित्र मार्ग है, इससे पीछे हटना आत्मघाती है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... समाज में हमारी जो भूमिका या कर्तव्य तय है, संकट के समय उससे पीछे न हटकर उसका पूरी निष्ठा से पालन करना ही हमारा वास्तविक स्वधर्म है।

श्लोक संख्या: **2.32**

> यदृच्छया चोपपन्नं स्वर्गद्वारमपावृतम् |
> सुखिनः क्षत्रियाः पार्थ लभन्ते युद्धमीदृशम् || **32** ||

हिन्दी अनुवाद:

हे पार्थ! अपने आप प्राप्त हुआ और खुले हुए स्वर्ग के द्वार के समान इस प्रकार के युद्ध को भाग्यशाली क्षत्रिय ही प्राप्त करते हैं।

सरल व्याख्या:

भगवान कहते हैं कि यह युद्ध तुमने स्वयं नहीं थोपा है, बल्कि यह अधर्म के चरम पर पहुँचने के कारण स्वतः सामने आया है। न्याय की स्थापना का ऐसा अवसर किसी भी सच्चे कर्मवीर के लिए एक वरदान की तरह होता है, जो उसके लिए उन्नति के मार्ग (स्वर्गद्वार) खोलता है। ऐसे धर्मयुद्ध में भाग लेने का अवसर बड़े भाग्य से ही किसी को मिलता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... जीवन में जब अन्याय या विपरीत परिस्थितियों से लड़ने का अवसर स्वतः सामने आए, तो उसे संकट नहीं बल्कि स्वयं को प्रमाणित करने का एक ईश्वरीय अवसर मानना चाहिए।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.33**

> अथ चेत्त्वमिमं धर्म्यं सङ्ग्रामं न करिष्यसि |
> ततः स्वधर्मं कीर्तिं च हित्वा पापमवाप्स्यसि || **33** ||

हिन्दी अनुवाद:
किंतु यदि तुम इस धर्मयुक्त युद्ध को नहीं करोगे, तो अपने स्वधर्म और कीर्ति (यश) को खोकर पाप को प्राप्त होगे।

सरल व्याख्या:
श्रीकृष्ण अर्जुन को कर्तव्य से भागने के गंभीर परिणामों के प्रति सचेत करते हैं। वे कहते हैं कि यदि तुम इस समय युद्ध के मैदान से पैर पीछे खींचते हो, तो संसार इसे तुम्हारा त्याग नहीं बल्कि तुम्हारी कायरता मानेगा। ऐसा करने से तुम समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारी (स्वधर्म) को तो तोड़ोगे ही, अपना यश भी खो दोगे और एक गलत उदाहरण प्रस्तुत करने के कारण पाप के भागी बनोगे।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... अपने अनिवार्य उत्तरदायित्वों से मुंह मोड़ना सात्विकता नहीं है, बल्कि वह एक प्रकार का मानसिक अपराध और पाप ही है।

श्लोक संख्या: **2.34**

> अकीर्तिं चापि भूतानि कथयिष्यन्ति तेऽव्ययाम् |
> सम्भावितस्य चाकीर्ति र्मरणादतिरिच्यते || **34** ||

हिन्दी अनुवाद:
और सब लोग तुम्हारी बहुत काल तक रहने वाली अकीर्ति (अपयश) का कथन करेंगे; और सम्मानित मनुष्य के लिए अपयश, मृत्यु से भी बढ़कर (बढ़कर दुःखद) होता है।

सरल व्याख्या:
भगवान अर्जुन के क्षत्रिय स्वाभिमान को झकझोरते हैं। वे कहते हैं कि समाज में तुम्हारी पहचान एक महान शूरवीर के रूप में है। यदि तुम यहाँ से भाग गए, तो आने वाली पीढ़ियाँ सदियों तक तुम्हारी कायरता की बातें करेंगी। एक ऐसा व्यक्ति जिसने जीवन भर सम्मान पाया हो, उसके लिए समाज में होने वाली बदनामी और अपयश का दुःख शारीरिक मृत्यु से भी कहीं अधिक भयानक होता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... एक गौरवमयी और मूल्यवान जीवन जीने वाले व्यक्ति के लिए सिद्धांतों से समझौता करके जीवित रहने से बेहतर अपने सिद्धांतों के लिए संघर्ष करना होता है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **35**

> भयाद्रणादुपरतं मंस्यन्ते त्वां महारथाः |
> येषां च त्वं बहुमतो भूत्वा यास्यसि लाघवम् || **35** ||

हिन्दी अनुवाद:

जिन महारथियों की दृष्टि में तुम पहले बहुत सम्मानित थे, वे सब तुम्हें डर के मारे युद्ध से हटा हुआ मानेंगे और उनकी दृष्टि में तुम अत्यंत तुच्छता (लघुता) को प्राप्त हो जाओगे।

सरल व्याख्या:

अर्जुन सोच रहा था कि युद्ध न करके वह अपनों पर दया दिखा रहा है। लेकिन श्रीकृष्ण कड़वी सच्चाई सामने रखते हुए कहते हैं कि दुर्योधन और अन्य महारथी तुम्हारी इस दया को नहीं समझेंगे। वे यही सोचेंगे कि अर्जुन डर गया और युद्ध भूमि छोड़कर भाग गया। जिन शत्रुओं के सामने तुम्हारा मान-सम्मान बहुत ऊंचा था, वहाँ तुम पूरी तरह हल्के और तुच्छ मान लिए जाओगे।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... दुनिया अक्सर हमारे आंतरिक इरादों को नहीं, बल्कि हमारे बाहरी कर्मों को देखती है; इसलिए अपनी कमज़ोरी को ऊंचे विचारों की आड़ में छिपाना व्यर्थ है।

श्लोक संख्या: **2.36**

> अवाच्यवादांश्च बहून्बदिष्यन्ति तवाहिताः |
> निन्दन्तस्तव सामर्थ्यं ततो दुःखतरं नु किम् || **36** ||

हिन्दी अनुवाद:

और तुम्हारे शत्रु तुम्हारे सामर्थ्य (वीरता) की निंदा करते हुए तुम्हें बहुत से न कहने योग्य वचन (कटु वचन) कहेंगे; तुम्हारे लिए उससे बढ़कर और अधिक दुःख की बात क्या होगी?

सरल व्याख्या:

श्रीकृष्ण कहते हैं कि तुम्हारे विरोधी तुम्हारी वीरता पर प्रश्न उठाएंगे और ऐसे अपशब्द कहेंगे जो सुने भी नहीं जा सकते। जिस अर्जुन ने जीवन भर पुरुषार्थ की साधना की हो, उसके लिए अपनी आंखों के सामने अपनी ही सामर्थ्य की निंदा सुनना सबसे बड़ा मानसिक कष्ट होगा। कृष्ण अर्जुन को समझा रहे हैं कि भागने का रास्ता तुम्हें शांति नहीं, बल्कि और अधिक गहरा मानसिक संताप देगा।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... परिस्थितियों से भागकर कोई भी व्यक्ति मानसिक शांति नहीं पा सकता; संघर्ष से पलायन करना हमेशा और अधिक अपमान तथा दुःख की ओर ले जाता है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.37**

> हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम् |
> तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृतनिश्चयः || **37** ||

हिन्दी अनुवाद:

यदि तू युद्ध में मारा गया तो स्वर्ग को प्राप्त होगा और यदि जीत गया तो पृथ्वी के राज्य को भोगेगा। इसलिए हे कौन्तेय! युद्ध के लिए निश्चय करके खड़ा हो जा।

सरल व्याख्या:

भगवान अर्जुन को पूर्ण संकल्प लेने के लिए कह रहे हैं। यहाँ स्वर्ग का अर्थ केवल सुख नहीं, बल्कि कर्तव्य पथ पर बलिदान से मिलने वाली परम गति है। हार हो या जीत, दोनों ही स्थितियों में साधक का लाभ ही है क्योंकि वह अपने धर्म पर अडिग रहा। पलायन में केवल अपमान और पतन है, जबकि संघर्ष में उन्नति निश्चित है। अतः मन के संशय को त्यागकर कर्म में जुट जाना ही एकमात्र मार्ग है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... कर्तव्य पथ पर होने वाला नुकसान भी वास्तव में एक आध्यात्मिक लाभ ही होता है, इसलिए परिणाम की चिंता छोड़ संकल्प के साथ कार्य करना चाहिए।

श्लोक संख्या: **2.38**

> सुखदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ |
> ततो युद्धाय युज्यस्व नैवं पापमवाप्स्यसि || **38** ||

हिन्दी अनुवाद:

सुख-दुख, लाभ-हानि और जय-पराजय को समान समझकर, उसके बाद युद्ध के लिए तैयार हो जा; इस प्रकार युद्ध करने से तू पाप को प्राप्त नहीं होगा।

सरल व्याख्या:

यह निष्काम कर्म की नींव है। जब मनुष्य कर्म को केवल अपनी पसंद या लाभ के लिए करता है, तब वह पाप-पुण्य के बंधन में फँसता है। लेकिन जब कर्म केवल 'ईश्वर की आज्ञा' और 'कर्तव्य' समझकर किया जाता है, जिसमें व्यक्तिगत राग-द्वेष नहीं होता, तो वह कर्म बंधन मुक्त कर देता है। मन की समता ही वह ढाल है जो हमें कर्मों के विषैले प्रभाव से बचाती है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... मानसिक संतुलन और निरपेक्ष भाव से किया गया कर्म कभी भी मनुष्य के पतन का कारण नहीं बनता।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.39**

> एषा तेऽभिहिता सांख्ये बुद्धिर्योगे त्विमां श्रृणु |
> बुद्ध्या युक्तो यया पार्थ कर्मबन्धं प्रहास्यसि || **39** ||

हिन्दी अनुवाद:

हे पार्थ! यह बुद्धि तेरे लिए ज्ञान (सांख्य) के विषय में कही गई, अब तू इसे कर्मयोग के विषय में सुन, जिस बुद्धि से युक्त होकर तू कर्मों के बंधन को पूरी तरह काट सकेगा।

सरल व्याख्या:

अब तक भगवान ने आत्मा की अमरता का ज्ञान दिया। अब वे उस ज्ञान को क्रिया में उतारने की कला सिखा रहे हैं। केवल यह जानना कि 'मैं आत्मा हूँ' पर्याप्त नहीं है, बल्कि संसार में रहते हुए कर्मों के बीच उस बोध को कैसे बनाए रखना है कि कर्म हमें न बांधें, यही योग है। यह योग ही कर्मों की बेड़ियों को काटने की सामर्थ्य रखता है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... सैद्धांतिक ज्ञान जब व्यावहारिक आचरण (योग) में बदलता है, तभी वह मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करता है।

श्लोक संख्या: **2.40**

> नेहाभिक्रमनाशोऽस्ति प्रत्यवायो न विद्यते |
> स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात् || **40** ||

हिन्दी अनुवाद:

इस निष्काम कर्मयोग के मार्ग में आरम्भ का नाश नहीं होता और न ही इसमें कोई उल्टा फल मिलता है। इस धर्म का थोड़ा सा भी अंश महान भय से रक्षा कर लेता है।

सरल व्याख्या:

सांसारिक कार्यों में यदि काम पूरा न हो तो फल नहीं मिलता, लेकिन इस साधना के पथ पर किया गया छोटा सा प्रयास भी कभी व्यर्थ नहीं जाता। वह आत्मा पर एक स्थाई संस्कार छोड़ता है। इसमें कोई हानि का भय नहीं है। इस पथ पर बढ़ा गया एक भी छोटा कदम मनुष्य को जन्म-मृत्यु के चक्र और अज्ञान के महान डर से बचा लेता है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... आध्यात्मिक मार्ग पर की गई छोटी सी भी प्रगति शाश्वत होती है और वह साधक के कल्याण का आधार बनती है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.41**

> व्यवसायात्मिका बुद्धिरेकेह कुरुनन्दन |
> बहुशाखा ह्यनन्ताश्च बुद्धयोऽव्यवसायिनाम् || **41** ||

हिन्दी अनुवाद:

हे कुरुनन्दन! इस मार्ग में निश्चयात्मक बुद्धि एक ही होती है, किन्तु अस्थिर विचार वाले मनुष्यों की बुद्धियाँ बहुत शाखाओं वाली और अनंत होती हैं।

सरल व्याख्या:

सच्चे साधक का लक्ष्य केवल एक होता है—परमात्मा की प्राप्ति। इसलिए उसकी बुद्धि एकाग्र और अडिग रहती है। इसके विपरीत, जो केवल सांसारिक इच्छाओं में उलझे हैं, उनका मन हजारों दिशाओं में भटकता रहता है। जैसे एक केंद्र से जुड़ी पहिये की तीलियाँ स्थिर रहती हैं, वैसे ही लक्ष्य से जुड़ी बुद्धि ही शांति प्राप्त कर सकती है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... दृढ़ निश्चय और एकनिष्ठ लक्ष्य ही मानसिक एकाग्रता और आध्यात्मिक सफलता की कुंजी है।

श्लोक संख्या: **2.42, 2.43** और **2.44**

> यामिमां पुष्पितां वाचं प्रवदन्त्यविपश्चितः |
> वेदवादरताः पार्थ नान्यदस्तीति वादिनः || **42** ||
> कामात्मानः स्वर्गपरा जन्मकर्मफलप्रदाम् |
> क्रियाविशेषबहुलां भोगैश्वर्यगतिं प्रति || **43** ||
> भोगैश्वर्यप्रसक्तानां तयापहृतचेतसाम् |
> व्यवसायात्मिका बुद्धिः समाधौ न विधीयते || **44** ||

हिन्दी अनुवाद:

हे पार्थ! जो भोगों में तन्मय हैं और वेदों के केवल कर्मकांडों में रुचि रखते हैं, वे दिखावटी वचनों में उलझे रहते हैं। वे स्वर्ग को ही परम लक्ष्य मानते हैं। ऐसे भोगों और ऐश्वर्य में आसक्त चित्त वाले पुरुषों की परमात्मा में निश्चयात्मक बुद्धि नहीं हो पाती।

सरल व्याख्या:

भगवान यहाँ दिखावटी धार्मिकता पर चोट करते हैं। जो लोग धर्म को केवल अपनी मनोकामनाएं पूरी करने का साधन मानते हैं, वे कभी सत्य को नहीं जान पाते। वे मंत्रों और क्रियाओं का उपयोग केवल सुख-सुविधाओं के लिए करते हैं। जिनका मन 'क्या मिलेगा' के लोभ में फँसा है, उनकी बुद्धि कभी 'समाधि' (परमात्मा में पूर्ण ठहराव) की स्थिति तक नहीं पहुँच सकती।

> ये श्लोक हमें बताते हैं कि... सांसारिक लालसा और दिखावटी कर्मकांड ईश्वर की प्राप्ति में सबसे बड़े अवरोध हैं।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.45**

> त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन |
> निर्द्वन्द्वो नित्यसत्त्वस्थो निर्योगक्षेम आत्मवान् || **45** ||

हिन्दी अनुवाद:

वेद तीनों गुणों (सत्, रज, तम) के कार्यों का वर्णन करते हैं; हे अर्जुन! तू इन तीनों गुणों से ऊपर उठ। द्वंद्वों से रहित होकर, नित्य सत्त्व गुण में स्थित हो और भविष्य की चिंता तथा प्राप्त की रक्षा के मोह को छोड़कर आत्मपरायण बन।

सरल व्याख्या:

संसार प्रकृति के तीन गुणों का खेल है। भगवान अर्जुन को इस खेल से बाहर निकलने का आदेश देते हैं। 'निर्योगक्षेम' का अर्थ है—जो नहीं है उसे पाने की तड़प और जो है उसे खोने का डर, इन दोनों को छोड़ देना। जब मनुष्य खुद को पूरी तरह ईश्वर को सौंप देता है और अपने भीतर की आत्मा में स्थित होता है, तभी वह वास्तविक स्वतंत्रता का अनुभव करता है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... सांसारिक गुणों और चिंताओं से ऊपर उठकर आत्मा में स्थिर होना ही परम सिद्धि है।

श्लोक संख्या: **2.46**

> यावानर्थ उदपाने सर्वतः सम्प्लुतोदके |
> तावान्सर्वेषु वेदेषु ब्राह्मणस्य विजानतः || **46** ||

हिन्दी अनुवाद:

सब ओर से जल से परिपूर्ण बड़े जलाशय के प्राप्त हो जाने पर छोटे जलाशय में मनुष्य का जितना प्रयोजन रहता है, ब्रह्म को जानने वाले ज्ञानी का समस्त वेदों में उतना ही प्रयोजन रह जाता है।

सरल व्याख्या:

जब प्यासा व्यक्ति गंगा के किनारे पहुँच जाता है, तो उसे कुएँ की आवश्यकता नहीं रहती। वैसे ही, जिसे परमात्मा का सीधा अनुभव हो गया है, उसके लिए शास्त्रों के शब्द और कर्मकांडों की विधियाँ गौण (कम महत्व की) हो जाती हैं। शास्त्र केवल मार्ग दिखाते हैं, लेकिन परमात्मा ही गंतव्य है। गंतव्य पर पहुँचने के बाद मार्ग के नक्शे की आवश्यकता नहीं रहती।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... आत्मिक अनुभव के सामने संसार का समस्त किताबी ज्ञान और विधियाँ छोटी पड़ जाती हैं।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.47**

> कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन |
> मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि || **47** ||

हिन्दी अनुवाद:
तेरा अधिकार केवल कर्म करने में है, उसके फलों में कभी नहीं। इसलिए तू कर्मों के फल की इच्छा वाला मत बन और तेरी आसक्ति कर्म न करने में भी न हो।

सरल व्याख्या:
यह गीता का सबसे महत्वपूर्ण संदेश है। मनुष्य केवल कर्म करने में स्वतंत्र है, परिणाम उसके हाथ में नहीं है। जब हम फल की चिंता करते हैं, तो हम वर्तमान के कर्म को ठीक से नहीं कर पाते। भगवान कहते हैं कि न तो फल का लालच रखो और न ही फल न मिलने के डर से कर्म छोड़ो (आलसी बनो)। बस उसे अपना कर्तव्य मानकर सर्वश्रेष्ठ प्रयास करो।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... कर्म को ही पूजा मानना और परिणाम को ईश्वर पर छोड़ देना ही शांति और सफलता का सूत्र है।

श्लोक संख्या: **2.48**

> योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनंजय |
> सिद्ध्यासिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते || **48** ||

हिन्दी अनुवाद:
हे धनंजय! आसक्ति को त्यागकर तथा सफलता और असफलता में समान भाव रखकर योग में स्थित होकर कर्मों को कर। यह 'समत्व' ही योग कहलाता है।

सरल व्याख्या:
योग का वास्तविक अर्थ है—मन का संतुलन। काम पूरा हो जाए तो अहंकार न आए और अधूरा रह जाए तो शोक न हो। इस मानसिक स्थिरता के साथ जो भी कार्य किया जाता है, वह योग है। साधक को चाहिए कि वह बाहरी दुनिया के उतार-चढ़ाव के बीच भी अपने भीतर की शांति को न खोए।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... जीवन की हर स्थिति में मन की समता बनाए रखना ही वास्तविक योग की परिभाषा है।

Satyanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.49**

> दूरेण ह्यवरं कर्म बुद्धियोगाद्धनंजय |
> बुद्धौ शरणमन्विच्छ कृपणाः फलहेतवः || **49** ||

हिन्दी अनुवाद:

हे धनंजय! इस समत्व बुद्धि योग की अपेक्षा स्वार्थ के लिए किया गया कर्म अत्यंत निम्न श्रेणी का है। इसलिए तू बुद्धि की शरण खोज; क्योंकि फल के लिए काम करने वाले लोग अत्यंत दीन (कृपण) हैं।

सरल व्याख्या:

जो केवल अपने स्वार्थ के लिए काम करते हैं, वे भिखारी की तरह हैं जो हमेशा फल की उम्मीद में बेचैन रहते हैं। भगवान कहते हैं कि कर्म के पीछे का भाव (इंटेंशन) महत्वपूर्ण है। अपनी बुद्धि को स्थिर करो और फल की दासता से मुक्त हो जाओ। जो केवल परमात्मा के लिए कर्म करता है, वही वास्तव में अमीर और स्वतंत्र है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... फल की इच्छा से किया गया कार्य मानसिक दरिद्रता है, जबकि निष्काम कर्म बुद्धिमानी है।

श्लोक संख्या: **2.50**

> बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुष्कृते |
> तस्माद्योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम् || **50** ||

हिन्दी अनुवाद:

समबुद्धि से युक्त पुरुष इसी जन्म में पुण्य और पाप दोनों का त्याग कर देता है। इसलिए तू योग में लग जा; कर्मों में यह कुशलता ही योग है।

सरल व्याख्या:

'योगः कर्मसु कौशलम्'—कर्म को इस प्रकार करने की कला कि वह बंधन न बने, वही योग है। एक कुशल व्यक्ति संसार में सब कुछ करते हुए भी उससे अछूता रहता है, जैसे कीचड़ में कमल। जब कर्म केवल सेवा भाव से होता है, तो वह व्यक्ति को पाप और पुण्य के चक्र से ऊपर उठा देता है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... अनासक्त भाव से श्रेष्ठतम कर्म करना ही जीवन जीने की वास्तविक कला है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.51**

> कर्मजं बुद्धियुक्ता हि फलं त्यक्त्वा मनीषिणः |
> जन्मबन्धविनिर्मुक्ताः पदं गच्छन्त्यनामयम् || **51** ||

हिन्दी अनुवाद:
क्योंकि बुद्धिमान मनुष्य कर्मों से उत्पन्न होने वाले फल को त्यागकर, जन्म के बंधन से मुक्त हो, परम पद (परमानंद) को प्राप्त होते हैं।

सरल व्याख्या:
इच्छाएँ ही जन्म का कारण बनती हैं। जब साधक फल की आसक्ति छोड़ देता है, तो उसकी यात्रा पूर्ण हो जाती है। वह उस स्थान पर पहुँच जाता है जहाँ कोई रोग, शोक या दुख (अनामय) नहीं है। यह स्थिति कर्म के फल को परमात्मा को समर्पित करने से ही प्राप्त होती है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... फल का त्याग करने से ही मनुष्य जन्म-मृत्यु के चक्र से मुक्त होकर मोक्ष पाता है।

श्लोक संख्या: **2.52** और **2.53**

> यदा ते मोहकलिलं बुद्धिर्व्यतितरिष्यति |
> तदा गन्तासि निर्वेदं श्रोतव्यस्य श्रुतस्य च || **52** ||
> श्रुतिविप्रतिपन्ना ते यदा स्थास्यति निश्चला |
> समाधावचला बुद्धिस्तदा योगमवाप्स्यसि || **53** ||

हिन्दी अनुवाद:
जिस समय तेरी बुद्धि मोह रूपी दलदल को पार कर जाएगी, उस समय तू सब भोगों से विरक्त हो जाएगा। भाँति-भाँति के वचनों को सुनने से विचलित हुई तेरी बुद्धि जब परमात्मा में अचल हो जाएगी, तब तू योग को प्राप्त होगा।

सरल व्याख्या:
अभी अर्जुन की बुद्धि दूसरों की बातों और मोह में फँसी है। भगवान कहते हैं कि जब तुम इस मानसिक कचरे से बाहर निकलोगे, तो तुम्हें बाहरी उपदेशों की आवश्यकता नहीं रहेगी। जब तुम्हारा मन बिना किसी विक्षेप के परमात्मा में स्थिर हो जाएगा, तभी तुम वास्तव में उनसे जुड़ पाओगे।

> ये श्लोक हमें बताते हैं कि... मोह का त्याग और मन की अचल स्थिरता ही ईश्वर से मिलन का एकमात्र द्वार है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.54**

> स्थितप्रज्ञस्य का भाषा समाधिस्थस्य केशव |
>
> स्थितधीः किं प्रभाषेत किमासीत व्रजेत किम् || **54** ||

हिन्दी अनुवाद:

अर्जुन ने कहा—हे केशव! समाधि में स्थित स्थिर बुद्धि वाले पुरुष के क्या लक्षण हैं? वह कैसे बोलता है, कैसे बैठता है और कैसे चलता है?

सरल व्याख्या:

अर्जुन अब उस व्यक्ति के बारे में जानना चाहता है जो इस ज्ञान को जी रहा है। वह समझना चाहता है कि एक ज्ञानी का व्यवहार आम लोगों से कैसे अलग होता है ताकि वह स्वयं भी उस मार्ग पर चल सके।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... जिज्ञासु शिष्य हमेशा ज्ञान के व्यावहारिक पक्ष को समझने का प्रयास करता है।

श्लोक संख्या: **2.55**

> प्रजहाति यदा कामान्सर्वान्पार्थ मनोगतान् |
>
> आत्मन्येवात्मना तुष्टः स्थितप्रज्ञस्तदोच्यते || **55** ||

हिन्दी अनुवाद:

श्री भगवान ने कहा—हे पार्थ! जिस समय मनुष्य मन की समस्त कामनाओं को त्याग देता है और अपने आप से अपने आप में ही संतुष्ट रहता है, वह स्थितप्रज्ञ कहा जाता है।

सरल व्याख्या:

स्थितप्रज्ञ वह है जिसकी खुशी किसी बाहरी वस्तु पर निर्भर नहीं है। वह अपने भीतर ही आनंद का सागर पा चुका है। जब मन की सारी भाग-दौड़ शांत हो जाती है और व्यक्ति स्वयं में पूर्ण महसूस करता है, तब वह स्थिर बुद्धि वाला कहलाता है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... बाहरी इच्छाओं का अंत और आंतरिक संतोष ही पूर्ण पुरुष की पहचान है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.56**

> दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः |
> वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते || **56** ||

हिन्दी अनुवाद:

दुखों में जिसका मन व्याकुल नहीं होता, सुखों की प्राप्ति की जिसकी लालसा खत्म हो गई है और जिसके राग, भय तथा क्रोध नष्ट हो गए हैं, वह मुनि स्थिर बुद्धि कहा जाता है।

सरल व्याख्या:

स्थितप्रज्ञ के जीवन में भी परिस्थितियाँ आती हैं, पर वे उसके भीतर उथल-पुथल नहीं मचा पातीं। वह सुख में बहुत खुश नहीं होता और दुख में टूटता नहीं। उसने अपने सबसे बड़े शत्रुओं—राग (अत्यधिक लगाव), भय और क्रोध—को जीत लिया है। वह एक शांत झील की तरह है जिसमें कंकड़ फेंकने पर भी गहराई विचलित नहीं होती।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... विपरीत स्थितियों में भी मन की शांति न खोना ही वास्तविक साधना है।

श्लोक संख्या: **2.57**

> यः सर्वत्रानभिस्नेहस्तत्तत्प्राप्य शुभाशुभम् |
> नाभिनन्दति न द्वेष्टि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता || **57** ||

हिन्दी अनुवाद:

जो पुरुष सर्वत्र आसक्ति रहित है और शुभ या अशुभ वस्तु को पाकर न प्रसन्न होता है और न द्वेष करता है, उसकी बुद्धि स्थिर है।

सरल व्याख्या:

ज्ञानी व्यक्ति संसार के साथ जुड़ा तो है पर बंधा नहीं है। वह हर परिस्थिति को एक 'साक्षी' (गवाह) की तरह देखता है। जैसे सूर्य गंदे नाले पर भी चमकता है और गंगा पर भी, पर वह खुद अछूता रहता है, वैसे ही ज्ञानी शुभ और अशुभ दोनों में निष्पक्ष रहता है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... किसी भी वस्तु या व्यक्ति के प्रति मोह न रखना ही बुद्धि की स्थिरता का लक्षण है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.58**

> यदा संहरते चायं कूर्मोऽङ्गानीव सर्वशः |
> इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता || **58** ||

हिन्दी अनुवाद:

जैसे कछुआ सब ओर से अपने अंगों को समेट लेता है, वैसे ही जब यह पुरुष इन्द्रियों को विषयों से हटा लेता है, तब उसकी बुद्धि स्थिर होती है।

सरल व्याख्या:

कछुआ अपनी रक्षा के लिए अपने अंगों को अपने मजबूत कवच में खींच लेता है। वैसे ही, साधक को पता होता है कि कब उसे अपनी इन्द्रियों को बाहरी प्रलोभनों से बचाना है। वह इन्द्रियों का गुलाम नहीं होता, बल्कि उनका स्वामी होता है। वह केवल उतना ही विषयों को ग्रहण करता है जितना जीवन के लिए अनिवार्य है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... इन्द्रियों पर पूरा नियंत्रण होना ही आत्मिक सुरक्षा का मार्ग है।

श्लोक संख्या: **2.59**

> विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः |
> रसवर्जं रसोऽप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते || **59** ||

हिन्दी अनुवाद:

इन्द्रियों द्वारा विषयों को ग्रहण न करने वाले पुरुष के भी केवल विषय तो निवृत्त हो जाते हैं, परन्तु उनमें रहने वाली आसक्ति निवृत्त नहीं होती। इस पुरुष की आसक्ति भी परमात्मा का साक्षात्कार करके निवृत्त हो जाती है।

सरल व्याख्या:

अगर आप जबरदस्ती किसी चीज को छोड़ें, तो वह बाहर से तो छूट जाती है पर मन में उसकी याद बनी रहती है। यह मन का खिंचाव (रस) तब तक नहीं मरता जब तक आपको उससे भी बड़ी खुशी (परमात्मा का अनुभव) न मिल जाए। छोटे सुख को छोड़ने के लिए बड़े सुख का मिलना जरूरी है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... केवल बाहरी त्याग पर्याप्त नहीं है, आंतरिक वासनाएँ केवल ईश्वर के प्रेम से ही समाप्त होती हैं।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.60** और **2.61**

यततो ह्यपि कौन्तेय पुरुषस्य विपश्चितः |
इन्द्रियाणि प्रमाथीनि हरन्ति प्रसभं मनः || **60** ||
तानि सर्वाणि संयम्य युक्त आसीत मत्परः |
वशे हि यस्येन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता || **61** ||

हिन्दी अनुवाद:
हे कौन्तेय! यत्न करते हुए बुद्धिमान मनुष्य के मन को भी ये चंचल इन्द्रियाँ जबरदस्ती हर लेती हैं। इसलिए उन सबको वश में करके, मुझमें परायण होकर बैठे; क्योंकि जिसकी इन्द्रियाँ वश में होती हैं, उसकी बुद्धि स्थिर होती है।

सरल व्याख्या:
इन्द्रियाँ इतनी ताकतवर हैं कि वे ज्ञानी का भी पैर फिसला सकती हैं। इसलिए भगवान कहते हैं कि केवल अपनी शक्ति पर भरोसा मत करो, बल्कि 'मत्परः' (मेरे आश्रित) हो जाओ। जब मन ईश्वर से जुड़ जाता है, तो उसे बाहरी चीजों में स्वाद नहीं आता और इन्द्रियाँ अपने आप शांत हो जाती हैं।

ये श्लोक हमें बताते हैं कि... इन्द्रियों को जीतने का सरल तरीका उन्हें ईश्वर की सेवा में लगा देना है।

श्लोक संख्या: **2.62** और **2.63**

ध्यायतो विषयान्पुंसः सङ्गस्तेषूपजायते |
सङ्गात्संजायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते || **62** ||
क्रोधाद्भवति सम्मोहः सम्मोहात्स्मृतिविभ्रमः |
स्मृतिभ्रंशाद्बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति || **63** ||

हिन्दी अनुवाद:
विषयों का चिंतन करने वाले पुरुष की उनमें आसक्ति हो जाती है। आसक्ति से कामना, कामना से क्रोध, क्रोध से भ्रम, भ्रम से स्मृति का नाश, और स्मृति नाश से बुद्धि का नाश हो जाता है, जिससे मनुष्य का पतन हो जाता है।

सरल व्याख्या:
यह पतन की पूरी प्रक्रिया है। विनाश 'सोचने' से शुरू होता है। जब आप बार-बार किसी चीज के बारे में सोचते हैं, तो उसे पाने की जिद (काम) पैदा होती है। जब वह नहीं मिलती, तो गुस्सा आता है। गुस्से में इंसान अपना विवेक खो देता है और सही-गलत की पहचान (स्मृति) भूल जाता है। अंत में वह खुद को नष्ट कर लेता है।

ये श्लोक हमें बताते हैं कि... अपने विचारों की दिशा को संभालना ही जीवन की रक्षा करना है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.64** और **2.65**

रागद्वेषवियुक्तैस्तु विषयानिन्द्रियैश्चरन् |
आत्मवश्यैर्विधेयात्मा प्रसादमधिगच्छति || **64** ||
प्रसादे सर्वदुःखानां हानिरस्योपजायते |
प्रसन्नचेतसो ह्याशु बुद्धिः पर्यवतिष्ठते || **65** ||

हिन्दी अनुवाद:
किन्तु अपने वश में किए हुए मन वाला पुरुष, राग-द्वेष से रहित इन्द्रियों द्वारा विषयों में विचरता हुआ अन्तःकरण की प्रसन्नता को प्राप्त होता है। इस प्रसन्नता से उसके सम्पूर्ण दुखों का नाश हो जाता है।

सरल व्याख्या:
साधना का अर्थ दुनिया छोड़ना नहीं, बल्कि दुनिया के बीच बिना राग-द्वेष के रहना है। ऐसा व्यक्ति संसार की वस्तुओं का उपयोग तो करता है, पर उनका गुलाम नहीं होता। ऐसा मन हमेशा खिला हुआ और प्रसन्न रहता है। और जहाँ सच्ची प्रसन्नता है, वहाँ कोई दुख टिक नहीं सकता।

> ये श्लोक हमें बताते हैं कि... संयमित मन ही वास्तविक शांति और अखंड खुशी का स्रोत है।

श्लोक संख्या: **2.66**

नास्ति बुद्धिरयुक्तस्य न चायुक्तस्य भावना |
न चाभावयतः शान्तिरशान्तस्य कुतः सुखम् || **66** ||

हिन्दी अनुवाद:
जिसका मन वश में नहीं है, उसमें निश्चयात्मक बुद्धि नहीं होती और न ही कर्तव्य का भाव होता है। शांति के बिना सुख कहाँ से मिल सकता है?

सरल व्याख्या:
सुख का सीधा रास्ता शांति से होकर जाता है। आप अरबपति होकर भी अगर मन से अशांत हैं, तो आप सुखी नहीं हैं। शांति के लिए मन का स्थिर होना जरूरी है। जिसका मन बेलगाम घोड़े की तरह भाग रहा है, वह जीवन के वास्तविक आनंद को कभी नहीं छू सकता।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... मन पर नियंत्रण ही सुख और शांति की अनिवार्य शर्त है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.67** और **2.68**

इन्द्रियाणां हि चरतां यन्मनोऽनुविधीयते |
तदस्य हरति प्रज्ञां वायुर्नावमिवाम्भसि || **67** ||
तस्माद्यस्य महाबाहो निगृहीताणि सर्वशः |
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता || **68** ||

हिन्दी अनुवाद:
जैसे जल में नाव को हवा हर लेती है, वैसे ही इन्द्रियों के पीछे भागता हुआ मन मनुष्य की बुद्धि को हर लेता है। इसलिए जिसकी इन्द्रियाँ वश में हैं, उसकी बुद्धि स्थिर है।

सरल व्याख्या:
अगर नाव चलाने वाला हवा के साथ ही बहने लगे, तो नाव कभी किनारे नहीं पहुँचेगी। वैसे ही, अगर हम अपनी इन्द्रियों की हर मांग को पूरा करने लगें, तो हमारा विवेक खत्म हो जाएगा। बुद्धि को बचाने के लिए इन्द्रियों की लगाम हाथ में रखना जरूरी है।

ये श्लोक हमें बताते हैं कि... इन्द्रियों की गुलामी ही बुद्धि के विनाश का कारण बनती है।

श्लोक संख्या: **2.69**

या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी |
यस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः || **69** ||

हिन्दी अनुवाद:
सम्पूर्ण प्राणियों के लिए जो रात्रि के समान है (आत्मज्ञान), उसमें संयमी पुरुष जागता है और जिसमें सब प्राणी जागते हैं (सांसारिक भोग), वह मुनि के लिए रात्रि के समान है।

सरल व्याख्या:
ज्ञानी और आम आदमी की दुनिया बिल्कुल उलटी है। आम आदमी जिसे 'रोशनी' समझकर भाग रहा है (पैसा, वासना, अहंकार), ज्ञानी के लिए वह अंधेरा और व्यर्थ है। जहाँ लोग सो रहे हैं (सत्य, शांति, सेवा), ज्ञानी वहीं अपनी आँखें खुली रखता है। उनकी प्राथमिकताएं एक-दूसरे के विपरीत होती हैं।

ये श्लोक हमें बताता है कि... सत्य के मार्ग पर चलने वाला व्यक्ति संसार के झूठे आकर्षणों में कभी नहीं फंसता।

Satyanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.70**

> आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठं समुद्रमापः प्रविशन्ति यद्वत् |
> तद्वत्कामा यं प्रविशन्ति सर्वे स शान्तिमाप्नोति न कामकामी || **70** ||

हिन्दी अनुवाद:

जैसे समुद्र में नदियाँ उसे विचलित किए बिना समा जाती हैं, वैसे ही जिस पुरुष में सब भोग बिना विकार पैदा किए समा जाते हैं, वही शांति प्राप्त करता है।

सरल व्याख्या:

समुद्र अपनी जगह स्थिर रहता है, चाहे उसमें कितनी ही नदियाँ गिरें। वैसे ही, ज्ञानी के सामने संसार के सारे सुख आते हैं, पर वे उसके मन को हिला नहीं पाते। वह हमेशा अपनी शांति में स्थित रहता है। जो इच्छाओं के पीछे भागता है, वह कभी शांत नहीं हो सकता।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... पूर्णता वही है जहाँ बाहरी परिस्थितियां आपके आंतरिक संतुलन को न बिगाड़ सकें।

श्लोक संख्या: **2.71**

> विहाय कामान्यः सर्वान्पुमांश्चरति निःस्पृहः |
> निर्ममो निरहंकारः स शान्तिमिधिगच्छति || **71** ||

हिन्दी अनुवाद:

जो पुरुष सम्पूर्ण कामनाओं को त्यागकर, लालसा रहित, ममता रहित और अहंकार रहित होकर विचरता है, वही शांति को प्राप्त होता है।

सरल व्याख्या:

शांति पाने के तीन अवरोध हैं—इच्छा (Wanting), ममता (Mine) और अहंकार (I)। जब मनुष्य यह समझ जाता है कि कुछ भी उसका नहीं है और वह केवल एक निमित्त है, तब उसका बोझ उतर जाता है। ऐसा व्यक्ति दुनिया में रहते हुए भी एक आजाद पंछी की तरह होता है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... 'मैं' और 'मेरा' के भाव को छोड़ना ही परम शांति का मार्ग है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **2.72**

> एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ नैनां प्राप्य विमुह्यति |
> स्थित्वास्यामन्तकालेऽपि ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति || **72** ||

हिन्दी अनुवाद:

हे पार्थ! यह ब्रह्म को प्राप्त हुए पुरुष की स्थिति है। इसे प्राप्त होकर मनुष्य कभी मोहित नहीं होता और अंतकाल (मृत्यु के समय) में भी इस स्थिति में स्थित होकर वह ब्रह्म-निर्वाण (परमानंद) को प्राप्त हो जाता है।

सरल व्याख्या:

यह अध्याय का शिखर है। 'ब्राह्मी स्थिति' का अर्थ है वह अवस्था जहाँ साधक का अपना अहंकार पूरी तरह मिट जाता है और केवल परमात्मा का अनुभव शेष रहता है। जैसे गंगा समुद्र में मिलकर समुद्र ही हो जाती है, वैसे ही इस स्थिति में पहुँचा पुरुष ईश्वरमय हो जाता है। मोह का दलदल सदा के लिए पीछे छूट जाता है। यदि कोई जीवन के अंतिम क्षण में भी इस सत्य को पहचान ले और स्वयं को शरीर के बजाय आत्मा जान ले, तो वह जन्म-मृत्यु के चक्र से मुक्त होकर परमानंद में विलीन हो जाता है।

> ये श्लोक हमें बताता है कि... परमात्मा में स्थित होना ही जीवन की सर्वोच्च उपलब्धि है, जो मृत्यु के भय को मिटाकर शाश्वत शांति प्रदान करती है।

Satyaanubhuti Ashram

॥ ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे सांख्ययोगो नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥

Satyaanubhuti Ashram